RESEARCH REVIEW JOURNALS
Volume-05
Issue-09
September-2020

ISSN: 2455-3085 (Online)
RESEARCH REVIEW International Journal of Multidisciplinary
www.rrjournals.com[Peer Reviewed Journal]
DOI: https://doi.org/10.31305/rrijm.2020.v05.i09.012

परिवर्तित भारतीय समाज में महिलाओं की स्थिति 'एक समाजशास्त्रीय अध्धययन'

डॉ. संजय कुमार निराला

पी.जी.टी. (समाजशास्त्र) राजकीय इंटर कॉलेज, तुर्की, मुजफ्फरपुर (बिहार)

प्रस्तावना

विश्व की लगभग 50 प्रतिशत जनसंख्या 'महिला के कल्याण व विकास की लहर 1970 के दशक में पूरे विश्व में दौड़ गई। उनके विकास व कल्याण को अंतर्राष्ट्रीय मुद्दा बनाने का प्रयास किया गया। धीरे–धीरे उसमें अपने अधिकारों के प्रति सजगता बढ़ी तथा अपनी स्थिति में सुधार के प्रति आशा की किरण का संचार हुआ, 1975 को 'अंतर्राष्ट्रीय महिला वर्ष' के रूप में मनाए जाने के कारण विश्व मंच पर महिला संबंधी समस्याओं व मुद्दे को प्रकाश में लाया गया। विश्व में महिला विकाश आंदोलन जोर पकड़ने लगा, इन्हीं आंदोलनों में आधारभूत प्रश्नों पर महिलाओ की मांगे प्रतिबिंबित होने लगी, जिसकी पूर्ति के लिए अनेक नीतियों व कार्यक्रमों को आरंभ किया गया। विश्व पटल पर महिलाओं की महत्वपूर्ण भूमिका विभिन्न समाजो में उसकी स्थिति उसकी प्रवृत्ति उनके विचार तथा दृष्टिकोण आदि को लाने का प्रयत्न किया जाने लगा।

''महिलाएं पूरूषों के हाथ का खिलौना नहीं है और न ही इनकी प्रतिद्वंदी है। महिलाओं एवं पुरुषों में आत्मा एक ही है और उनकी समस्याएँ भी एक जैसी है। महिला एवं पुरुष एक दूसरे के पूरक है''

राष्ट्रपिता महात्मा गांधी!

महिलाऐ हमारे देश की आबादी का लगभग आधा हिस्सा है, इसलिए राष्ट्र विकास के महान कार्य में महिलाओं की भूमिका तथा योगदान को पूरी तरह सही परिपेक्ष्य में रखकर ही राष्ट्र निमार्ण के कार्य को समझा जा सकता है। दुनिया में ऐसा कोई भी देश नहीं है जहाँ महिलाओं को हाशिय पर रखकर आर्थिक विकास संभव हुआ हो। महिलाओं को विकास की मुख्यधारा से जोड़े बिना किसी समाज, राज्य व देश के आर्थिक, सामाजिक, राजनैतिक विकास की कल्पना भी नहीं की जा सकती।

हाल ही में जारी की गई जनगणना रिपोर्ट के अनुसार भारत की आबादी 1 अरब 21 करोड़ हो गई है, इसमें 58.64 करोड़ महिलाऐं हैं। ऐसे में महिलाओं को स्वावलंबी बनाए बिना सशक्त भारत का सपना पूरा नहीं किया जा सकता। इसमें कोई संदेह नहीं है कि सदियों से चली आ रही व्यवस्था के तहत कामकाजी महिलाओं की संख्या काफी कम है। हालांकि महिलाएँ किसी भी मामले में पीछे नहीं रही है। उन्हें जो भी जिम्मेदारी सौपी गई, उन्होंने साबित कर दिया कि वे पुरुषों के समान हर मंजिल को हासिल कर सकती है। हमारी सरकार भी इस बात को स्वीकार करती है कि उन्हें स्वावलंबी बनाने की दिशा में निरंतर प्रयास किया जा रहा है।

परंपरागत भारतीय समाज के पुरुषों ने अपने स्वार्थवश महिलाओं की एक आदर्शवादी छवि गढ़ दी है और इस आदर्शवादी छवि के मूल में ही भेदभाव का तत्व छुपा है। आदर्शवाद की यह छवि महिलाओं पर जबरदस्ती लादी गई है। इस आदर्श के पीछे भेदभाव व उत्पीड़न की मंशा छिपी है और दुर्भाग्य की बात है कि इस आदर्श को सामाजिक मूल्य का नाम देकर महिलाओं को सदियों से छला जा रहा है। महिलाओं की स्थिति में सुधार के लिए आवश्यक है कि उन्हें जीवन के हर क्षेत्र में समानता का अधिकार दिया जाए और उनके अस्तित्व को सच्चे मन से स्वीकार किया जाए।

भारतीय समाज में महिलाओं की स्थिति

भारतीय संविधान पुरुषों व महिलाओं के बीच अधिकारों की समानता को मान्यता देता है, परन्तु निर्विवाद रूप से स्त्रियों की भूमिका व क्रिया क्षेत्र में भेद स्वीकार करता है। संवैधानिक समानता की व्यवस्था के पश्चात महिलाओं की स्थिति वैधानिक दृष्टि से तो सुदृढ़ हो गई है, परन्तु वास्तविक रूप में आज भी महिलाऐं शोषण व उत्पीड़न की शिकार बनी हुई है। परन्तु समाज में महिलओं की स्थिति को निम्नलिखित आधारों पर विश्लेषित किया जा सकता है।

महिलाओं कि स्थिति का मूल्यांकन करने के लिए उनकी सामाजिक रूपरेखा को जानना अति आवश्यक है। सामाजिक संरचना, सांस्कृतिक प्रतिमान तथा मूल्य, प्रणालियां पुरुषों व महिलाओं दोनों की व्यावहार संबंधी सामाजिक प्रत्याशओं पर प्रभाव डालती है और किसी हद तक समाज में महिलाओं की स्थिति निर्धारित करती है।

1. धर्मिक परंपराऐं व अंधविश्वास :–

हिन्दू धर्म में स्त्री का परम धर्म व कर्तव्य बचपन में पिता युवावस्था में पति व वृद्धावस्था में पुत्र की सेवा ही समझा गया। उसकी आदर्श भूमिका एक माता व पत्नी के रूप में मानी गई। उसका परम कर्त्तव्य पुरुष की सेवा व आज्ञा में निष्ठापूर्वक अपना जीवन व्यतीत करने में ही है। उसके द्वारा पुत्र को जन्म देना अत्यंत गौरव की बात समझा गया। वैधव्य को दुर्भाग्य से संबंधित किया गया। विधवाओं की किसी भी

RRIJM 2015, All Rights Reserved

धार्मिक व सामाजिक कार्य में भाग लेने की अनुमति नहीं दी गई ताकि वह अन्य व्यक्तियों के दुर्भाग्य की संवाहिका न बन जाए। 1856 में पुनर्विवाह को कानून द्वारा विधिक मान्यता प्राप्त हो जाने पर भी आत तक समाज में विधवाओं को पुनर्विवाह की अनुमति नहीं दी गई है जबकि हिन्दु पुरुष इस प्रकार के प्रतिबंधों व शर्तो से परे हैं।

गावों में व्याप्त अंधविश्वास का शिकार भी महिला को हि बनना पड़ता है। कई बार उसे षड़यंत्रों के तहत भूतनी, चुडैल, डायन आदि घोषित कर दिया जाता है तथा इस बहाने उसे दंडित भी किया जाता है।

बौद्ध, जैन, वैष्णव, शैव व सिख धर्मो जैसी शाखाओं में महिलाओं ने महिलाओं की स्थिति में विशेष रूप से उनके धार्मिक व आध्यात्मिक कार्यकलापों से संबंद्ध स्थिति में कुछ सुधार लाने का प्रयास किया किंतु सबके बावजूद इन धर्मो में भी महिलाओं को मुख्यतः माता व पत्नी के रूप में माना जाता है।

इस्लाम में कुरान शरीफ पुरुष व महिलाओं को समानता का दर्जा देता है व महिलाओं को धर्म के मार्ग में बाधक नहीं मानता, किंतु महिलाओं को मुल्ला या इमाम बनाने का, मस्जिदों में नमाज पढ़ने का, मजहबी संगठनों व कानूनी मामलों में हस्तक्षेप करने का कोई अधिकार नहीं है। पर्दा प्रथा को सामाजिक प्रतिक माना गया। इस्लाम धर्म में विवाह के लिए वधू की अनुमति का अधिकार दिया गया, किन्तु यह केवल एक औपचारिकता है। महिला के विधवा हो जाने पर पूनर्विवाह संपत्ति की वसीयत प्राप्त करने तथा विवाह विच्छेद के विरूद्ध मेहन का अधिकार है, किन्तु व्यावहार में समाज द्वारा अच्छा न समझे जाने के कारण इन अधिकारो को कोई समर्थन नहीं मिल पाता।

इसाई धर्म में महिलाओं को धार्मिक उत्सवों में भाग लेने का अधिकार है, किन्तु उसे चर्च के संगठन संबंधी दायित्व नहीं सौंपे जाते। इसाई धर्म में महिला के विवाह को ही उसकी एकमात्र नियति नहीं माना जाता, उसका अपना एक स्वतंत्र नैतिक अस्तित्व व दायित्व होता है। इसी पंरपरा के कारण अध्यापिकाओं, नर्सो डॉक्टरों के रूप में शिक्षा जैसे और अन्य कार्यक्षेत्रों में इसाई धर्म में महिलाओं पर कम निषेध है, फिर भी पुरुषों की तुलना में हीन होने दुनिया की संकल्पना विवाद से परे है।

पारसी धर्म समाज और परिवार में स्त्रियों को आदर देता है इसके अनुसार स्त्रियां संपठित, धार्मिक तथा धर्मेत्तर शिाक्षा की अधिकारी भी होती है। पारी धमै में यदि एक पुरुष किसी गैर पारसी के विवाह कर ले तो उसे कलंक नहीं माना जाता है किंतु यह अधिकार महिलाओं को नहीं है।

2. शिक्षा के क्षेत्र में महिलाओं की स्थिति :–

प्राचीन भारतीय समाज में 'नारी–शक्ति' के महत्व को स्वीकार किया गया। महिला परिवार की शक्ति का स्त्रोत है, परिवार की गतिविधियों का केन्द्र है, अतः महिला का आना सहज स्वभाविक है। महिला की शक्ति का प्रकट करने के आवश्यक कदमों में एक महत्वपूर्ण कदम उन्हें शिक्षा प्रदान करना है। महिला वर्ग में अशिक्षा ही संभवतः उनकी अशक्तता के लिए जिम्मेदार है और उनकी अशक्तता ही भारतीय समाज की अशक्तता के लिए जिम्मेदार है।

यूनिसेफ द्वारा 1999 में शिक्षा पर प्रकाशित एक प्रतिवेदन की प्रथम पक्तियां इस प्रकार है – 'लगभग 1 अरब व्यक्ति 21वीं शताब्दी में निरक्षर प्रवेष करेंगे, इनमें से 1/3 भारत में होंगे। विकासशील देशों में विद्यालय जाने की आयु वाले 130 मिलियन बच्चे विद्यालय की पहुच से बाहर रहेंगे। विद्यालय की पहुंच से बाहर रहने वाले इन बच्चों में 2/3 संख्या लड़कियों की होगी। इससे सिद्ध होता है कि भारत जैसे विकासशील देश में भी शिक्षा की दृष्टि से अधिकांश महिलाएं पीछे होंगी। महिलाओं में शिक्षा के अभाव का तात्पर्य उनमें आत्मनिर्भरता तथा आत्मविश्वास की कमी है, जिसके कारण वह अपनी समस्याओं को स्वतः समाधान करने में सक्षम नहीं है। गांधी जी ने कहा था कि –'एक लड़की की शिक्षा एक लड़के की शिक्षा की अपेक्षा अधिक महत्वपूर्ण है, क्योंकि लड़के को शिक्षित करने से वह अकेला शिक्षित होता है, किन्तु एक लड़की की शिक्षा से पूरा परिवार शिक्षित हो जाता है। किन्तु भारत में आज तक भी शिक्षा के क्षेत्र में पुरुष और महिलाओं के बीच विभेदीकरण बरता जाता है। अधिकांश लोग शिक्षा को चुंकि नौकरी प्राप्त करने का साधन मात्र समझते है। अतः वे लड़की के शिक्षा प्राप्त करने को सामाजिक दृष्टि से हेय समझते है। अधिक शिक्षित होने पर विवाह तथा दहेज संबंधी समस्याएं उपस्थित होने के भय से भी लोग लड़कियों की शिक्षा की उपेक्षा करते है।

ग्रामीण और निर्धन क्षेत्रों में पर्याप्त आय के अभाव में चूंकि परिवार के सभी सदस्यों को दैनिक आवश्यकताओं की पूर्ति हेतु आर्थिक क्रियाओं में संलग्न होना पड़ता है अतः लड़कियां या तो अपनी माता के काम पर जाने के पश्चात परिवार की देखभाल करती है अथवा आर्थिक क्रियाओं में भागीदार बनकर परिवार के भरण पोषण में सहायता करती है। अतः उनका विद्यालय जाना परिवार के हित में नहीं होता है। यही कारण है कि निःशुल्क शिक्षा की व्यवस्था होने पर भी वे साक्षर तक नहीं हो पाती और यदि शिक्षा की दृष्टि से परिवार में यदि कभी विचार किया भी जाता है तो प्रथम अवसर लड़कों को ही दिया जाता है और लडकियां इच्छूक होते हुए भी शिक्षा से वंचित रह जाती है।

यदि हम चाहते है कि महिलाएं राष्ट्रीय विकास की धारा में भागीदार बने तो उनका शिक्षित और जागरूक होना आवश्यक है, हमारे देश के ग्रामीण क्षेत्रों में बालिकाओं को शिक्षा में पिछड़ापन सवविदित है, यदि वे किसी प्रकार विद्यालय में प्रवेश ले भी लेती है तो भी ग्रामीण क्षेत्र में अधिकांश लड़कियों की प्राथमिक शिक्षा पूरी नहीं हो पाती है।

अब प्रत्येक पंचायत में एक माध्यमिक शाला बनाने का प्रयत्न किया जा रहा है। भारत सरकार ने 6 से 14 वर्ष तक के बच्चों को अनिवार्य शिक्षा का कानून भी 1 अप्रैल 2010 से लागू कर दिया है। लड़कियों के लिए 12वीं तक की शिक्षा निःशुल्क है। सरकार की ओर से लड़कियों की शिक्षा के संबंध में चलाई जा रही विभिन्न योजनाओं से लोगों में जागरूकता आई है।

महिलाओं में आत्मविश्वास, अपने अधिकारों के बारे में जागरूकता तथ अन्याय से लड़ने की नैमिक शक्ति शिक्षा से पैदा होती है वे अपने प्रति हो रहे सामाजिक और आर्थिक भेदभाव को जानकर उसका प्रतिकार करने योग्य बन सकती है। शिक्षा और जागरूकता के बढ़ने पर ही महिआएं कानून द्वारा दी गई सुविधओं का लाभ उठा सकेंगी।

3. स्वास्थ्य की दृष्टि से महिलाओं की स्थिति :–

देश में स्वस्थ नागरिक उसकी 'मानव पूंजी' होते है। स्वस्थ्य मनुष्य, स्वस्थ्य समाज का निर्माण करता है और समाज ही देष के आर्थिक तथा सामाजिक विकास की सीढ़ी होता है, अतः देश के हर नागरिक को स्वस्थ्य होना देश के मजबूती के लिए जरूरी है। एक स्वस्थ्य शरीर के लिए संतुलित भोजन ईंधन के तौर पर काम करता है। हमारे शरीर में जब भी भोजन के संतुलन में कमी आती है, शरीर कुपोषण का शिकार हो जाता है।

कुपोषण की वजह से कई देशों की विकास की गति धीमी हुई है। यूनेस्को द्वारा जारी की गई वर्ष 2004 की रिपोर्ट के अनुसार विकासशील देशों मे 5 बर्ष से कम आये वाले बच्चों में से आधे की मौत की कुपोषण है। कुपोषण का सीधा सा अर्थ है – 'समुचित पोषण का अभाव' समुचित पोषण प्राप्त करने के लिए सही ढंग से आहार नहीं लेता है तो यह देखा जाता है कि उसके शरीर में किसी न किसी तत्व की कमी हो जाती है, जिसका दुष्प्रभाव पूरे मनोदैहिक प्रणाली पर भी पड़ता है।

महिलाओं का कुपोषित होना पूरे समाज के लिए दुष्प्रभावकारी है, क्योंकि कुपोषित नारी का दुष्परिणाम न केवल उसे बल्कि आगामी पीढ़ी तक को भुगतना पड़ता है। यह तथ्यपूर्ण सत्य है कि महिलाएं ही पूरे परिवार तथा समाज का महत्वपूर्ण आधार स्तंभ है, अतः उसे पूरी तरह से स्वस्थ्य रखना समाज की सहत्वपूर्ण जिम्मेदारी है।

विश्व स्वास्थ्य संगठन यूनिसेफ व एन.एच.एफ.एस.–3 के आंकड़ों तथा गैर–सरकारी संगठनों की शोध रिपोर्ट के निष्कर्षो के अनुसार हमारे यहां ग्रामीण महिलाओं का स्वास्थ्य देष के आम नागरिको की तुलना में कही अधिक निम्न स्तरीय है। भारत में ग्रामीण महिलाएं लिंग भेद का शिकार होने के कारण बचपन में ही कुपोषण ग्रस्त हो जाती है, साथ ही पुरुषों की तुलना में दुगुने कार्यबोझ से दबी होती है, जो उनकी स्वास्थ्य स्थिति को और भी अधिक बदतर बनाना है।

पोषक विशषज्ञों के अनुसार एक व्यस्क महिला की कैलोरी संबंधी आवश्यकता इन प्रकार है :–

हल्का कार्य करने वाली	–	2000 कैलोरी
मध्यम कार्य करने वाली	–	2300 कैलोरी
भारी कार्य करने वाली	–	3000 कैलोरी

भोजन की मात्रा की मात्रा दृष्टि से पुरुषों को निःसंदेह अधिक भोज्य सामग्रियों की आवश्यकता पड़ती है परंतु पौष्टिकता की कसौटी पर महिलाओं का आहार ज्यादा संतुलित होना चाहिए। एक सामान्य महिला को प्रतिदिन कम से कम अग्रलिखित मात्रा में आहार लेना चाहिए –

अनाज	–	410 से 575 ग्राम
दाल	–	40 से 50 ग्राम
पत्तेदार सब्जी	–	100 से 150 ग्राम
दूध	–	150 से 200 मि.ली.
तेल तथा वसा	–	20 से 40 ग्राम
चीनी	–	20 से 40 ग्राम

भारत सरकार ने कुपोषण की समस्या के निपटने के लिए उचित नीतियां व कार्यक्रम बनाए हैं, जिसमें अने नीतियों तथा कार्यक्रम महिला स्वास्थय एवं कुपोषण के जुड़े हैं, जैसे– राष्ट्रीय ग्रामीण स्वास्थ्य मिशन, इंदिरा गाँधी मातृत्व सहयोग योजना, राजीव गांधी किशोरी सबल योजना, जननी सुरक्षा योजना आदि।

आज हम 22वीं सदी के अन राष्ट्रों की जमात में शामिल होने की जद्दोजहद कर रहे हैं, जो विकसित हैं, ऐसे में कुपोषण मुकित हमारा लक्ष्य होना चाहिए। कुपोषण, अर्थव्यवस्था को क्षति पहुँचाने के साथ–साथ राष्ट्रीय विकास पर भी प्रतिकुल प्रभाव डालता है। अंततः हम कह सकते हैं कि भारत की आर्थिक समृद्धि व विजन 2020 के सपनने को साकार को समाप्त करने की दिशा में सार्थक नीतिगत उपाय किए जाए, ताकि देश के ग्रामीण स्वास्थ्य परिदृष्य को बेहतर बनाया जा सके!

3.1 विवाह की औसत आयु :–

भारत के अनेक राज्यों जैसे– बिहार, उत्तर प्रदेश, राजस्थान, झारखण्ड, छत्तीसगढ़ व आन्ध्रप्रदेश में लड़कियों के विवाह की औसत आयु 18 वर्ष से कम है। राजस्थान में 15 से 19 वर्ष की आयु तक 41 प्रतिशत लड़कियों का विवाह हो जाता है। किशोर उम्र में लड़कियों का माँ बनना माँ एवं बच्चे के स्वास्थ्य के लिए गंभीर खतरा है, इससे उनके शरीर की स्थायी क्षति भी हो सकती है।

ठन दूषप्रभावों को देखते हुए बाल विवाह पर अविलंब प्रभावी रोक लगाए जाने की आवश्यकता है। इस संबंध में भारत सरकार द्वारा प्रस्तावित विवाह का अनिवार्य पंजीकरण कानून एक महत्वपूर्ण कदम हो सकता है, जिसके अंतर्गत प्रत्येक व्यस्क विवाह का पंजीकरण करवाना अनिवार्य होगा।

RRIJM 2015, All Rights Reserved

कानूनी बाध्यता एवं जागरूकता के कारण अब विवाह की उम्र धीरे–धीरे बढ़ रही है।

3.2 मातृ शिशु एवं मातृ मृत्यु दरः–

भारत विकासशील देशों में एक अग्रणी देश होने के बावजूद भी यहां शिशु मृत्यू दर अन्य देशों की तुलना में अधिक है। कई विकसित देशों में 1000 शिशु जन्म पर मृत्यु दर 10 है, जबकि भारत में 2001 में की जनगणना के अनुसार शिशु मृत्यु पर 64 है।

शहरी क्षेत्रों की तुलना में ग्रामीण क्षेत्रों में शिशु मृत्यू दर हमेशा अधिक रही है। सन् 1981 में शिशु मृत्यु दर नगरीय क्षेत्रों में 65 तथा ग्रामीण क्षेत्रों में 124 थी। वहीं सन् 1991 में यह कम होकर नगरीय क्षेत्रों में 58 तथा ग्रामीण क्षेत्रों में 98 थी सन् 2001 में इसमें और कमी आई, अब यह नगरीय क्षेत्रों में 42 तथा ग्रामीण क्षेत्रों में 72 है।

3.3 औसत जीवन प्रत्याषाः–

जनसंख्या की गुणवत्ता किसी भी देश की एक महत्वपूर्ण जनांकिकी विशेषता है जिसे वहां के लोगो की जीवन प्रत्यशा से देखा जा सकता है। किसी भी देश के लोग जन्म के समय से जीवित रहने के लिए जितने समय की आशा रखते है उसे 'जीवन प्रत्याक्षा' कहा जाता है। भारत में जीवन स्तर निम्न होने के कारण लोगों के पौष्टिक भोजन नहीं मिल पाता जिसके फलस्वरूप में वे संक्रमक बीमारियों से ग्रस्त हो जाते हैं। बच्चे कुपोषण के कारण शिशु अवस्था मी ही मृत्यु को प्राप्त हो जाते है। इसी प्रकार महिलाओं में प्रसुति काल में मृत्यु दर अधिक होती है, परन्तु अब धीरे–धीरे स्वास्थ्य जीवन स्तर बाल स्वास्थ्य एवं प्रसूति सेवाओं में विस्तार से मृत्यु दर कम हो रही है, जिससे जीवन प्रत्याक्षा बढ़ी है।

4. महिलाओं की आर्थिक स्थितिः–

किसी भी देश की आर्थिक प्रगति को जानने के लिए वहां की महिलाओं की स्थिति व स्तर का आंकलन करना अति आवश्यक है। समाज में महिलाओं की भूमिका महत्वपूर्ण होती है। महीलाओं को विकास की मुख्य धारा में जोड़े बिना किसी समाज, राज्य व देश के आर्थिक विकास की कल्पना भी नहीं की जा सकती।

चली आ रही धारण के अनुसार महिला का स्थान 'घर' है जीवन जीवन के घरेलू पक्ष को नियंत्रित एवं अनुशासित करना, परिवार के बाहरी उत्तरदायित्वों का निर्वहन करना एवं धनोपार्जन कर परिवार को चलाना पुरूष का कार्यक्षेत्र माना जाता है अत' महिला आर्थिक दृष्टि से पुरूष पर निर्भर है।

कुछ समय पूर्व तक या कहे तो औद्योगिक क्रांति से पूर्व जब महिला चेतना का शंखनाद नहीं हुआ था। पश्चिम में भी माना जाता था कि महिला को ईश्वर ने निर्बल बनाया है, अतः पुरूष महिला का संरक्षक है। पुरूष को समस्त अधिकार प्राप्त है व महिला के सर्वाधिकार सुरक्षित हैं।

आधुनिक औद्यौगिक, पुंजीवादी युग में यद्यपि महिला परम्परागत धारणाओं, मुल्यों एवं मान्यताओं को तोड़कर श्रम बाजार में अपनी क्षमता एवं योग्यता के आधार पर अपना स्थान निर्धानित कर चुकि है। आर्थिक आत्मनिर्भता ने सामाजिक स्वतंत्रता व समानता का मार्ग प्रशस्त किया है। महिला द्वारा समान अधिकारों की मांग से पुरूष के अहं को चोट पहुंजी हैं, किंतु यहां पुरूष असहाय हो जाता है, क्योंकि बढ़ते हुए आर्थिक दबावों के कारण वह महिला को रोजगार छोड़ने के लिए भी बाध्य नहीं कर सकता तथा दूसरी तरफ महिला भी अपनी आत्मनिर्भरता को समाप्त कर पुनः पुरूष की मात्र दासी नहीं बनना चाहती।

अब परिवार में महिला की भूमिका मात्र तटस्थ दर्शक की नहीं है। वह परिवार के सभी विषयों व निर्णयों में हिस्सा लेकर अपने सुझाव देती है तथा बदलते सामाजिक मूल्य आर्थिक–निर्भरता व क्षमता के कारण महिला के सुक्षाओं के प्रति परिवार का दृष्टिकोण सकारात्मक हो गया है। साथ ही कार्यालय एवं घर अनेक विवादों एवं समस्याओं से हमेशा तनावग्रस्त रहते हुए भी वह पारिवारिक समस्याओं में अपनी सक्रियता बनाए रखती है। कार्यशील महिला आज आत्मनिर्भर है, आर्थिक व पारिवारिक दायित्वों का निर्वहन वह पूरी निष्ठा के साथ कर रही है अतः परिवार में अपनी स्थिति के प्रति वह जागरूक है। यही वजह है कि उसकी प्रतिष्ठा व समान बढ़ा है।

वर्तमान में सरकार आधुनिक सूचना एवं संचार प्रौद्योगिकी के अनुप्रयोगों के आध्यक से ग्रामीण महिलाओं को नवीन सूचना, ज्ञान तथा कौशल के दृष्टिकोण से सशक्त व स्वावलंबी बनाते हुए उनको विकास की मुख्यधारा मे समावेशित करने का प्रयास कर रही है। गौरतलब है कि राष्ट्रीय कृषि एवं ग्रामीण विकास बैंक (नाबार्ड) भी खेती व पशुपालन से जुड़ी महिलाओं को नवविकसित प्रौद्योगिकी की जानकारी प्रदान करने एवं नवीन तकनीक को अपनाने हेतु आवश्यक ऋण सुविधाऐं प्रदान कर रही है।

कारपोरेट जगत में भारतीय महिलाओं ने अपनी उपस्थिति विश्व स्तर पर दर्ज की है। फार्च्यून पत्रिका के अनुसार, विश्व की 50 अग्रणी कारपोरेट महीलाओं में भारत की इंदिरा नुई दूसरे स्थान पर है, डॉ. किरण मजूमदान ने भी इस सूची में अपना स्थान बनाया है, इसके अतिरिक्त चंदा कोचर, मल्लिकस श्री निवास, नैना लाल किदवई, शिखा शर्मा, नीलम धवन, कल्पना मोरपारिचा, नीता अंबानी कारपोरेट के सफल नामों में शामिल हैं।

महिला आरक्षण विधेयक महिलाओं को सशक्त बनाने का एक माध्यम हो सकता है किंतु निहित स्वार्थो के कारण भारतीय राजनितिज्ञों ने इसे कानून का रूप देने में राजनितिक

इच्छा शक्ति नहीं दिखाई है, राजनैतिक नेताओं का डर है कि ऐसा होने से महिलाऐं भविष्य में हावी हो सकती हैं।

केवल सरकारी प्रयासों या कानून से तब तक किसी समस्या का हल नहीं निकल सकता जब तक महिलाएं स्वयं सक्रिय एवं जागरूक नहीं होगी।

5. महिलाओं की राजनीतिक स्थितिः–

ब्रम्ह समाज के प्रयत्नो से 1872 मं 'सिविल मैरिज एक्ट' आया, जिसे महिलाओं की दशा सुधारने में 'मील का पत्थर' कहा जा सकता है। आर्य समाज ने भी स्त्री शिक्षा पर जोर देकर उसकी उसकी भूमिका को महत्वपूर्ण बनाने का प्रयास किया। हांलाकि बहुत सीमित रूप में लेकिन महिलाएं राजनीति में भी आगे आनी शुरू हुई। राजा राम मोहन राय, रानाडे व दयानंद सरस्वती जैसे समाज सुधरकों ने प्रचीन भारत में स्त्रियों की स्थिति का गुणगान किया। इश्वर चन्द्र विद्यासागर, उग्र विचारधारा वाले विद्यानों ने जाति प्रथा पर कुठाराघात किया और कहा कि स्त्रियों के दमन के लिए जातिप्रथा ही उत्तरदायी है। ज्योतिवा फूले का मानना था कि शूद्र और स्त्रियों की शिक्षा की मनाही इसलिए कर दी गई ताकि वे मानवाधिकारों की स्वतंत्रता व समानता के सहत्व को समझ ही न सके और कानून रीतिरिवाज व परंपराओं में इसकी व्यवस्था कर दी गई ताकि वे अपनी निम्न स्थिति को स्वीकार कर लें।

1916 में प्रथम महिला विश्वविद्यालय की स्थापना की गई और इसने महिलाओं की परम्परागत भूमिका में परिवर्तन लाकर उसे सशक्त किया। 1917 में महिला मताधिकार और क्रांतिकारी परिवर्तन की मांग हुई। महिलाओं के मताधिकार की प्राप्ति के लिए सरोजनी नायडू एवं माग्रेट गजन्स जैसी हस्तियों सहित एक शिष्ट मंडल वायसराय से मिला। राष्ट्रीय कांग्रेस ने इसका समर्थन किया। मद्रास पहला प्रांत बना जिसने महिलाओं को वोट डालने का अधिकर दिया। 1927 में डॉ. मुधुलक्ष्मी रेड्डी पहली महिला थी, जो मद्रास विधानमंडल की सभासद बनी।

विश्व के अनेक देशों में महिला वर्ग को अपने महत्वपूर्ण राजनीतिक अधिकार मताधिकार के लिए संघर्ष करना पड़ा। इंग्लैड जैसे देश में लंबे राजनीतिक संघर्ष के बाद 1918 में महिला मताधिकार दिया गया, वहीं फ्रांस में महिला मताधिकार 1928 में मिल सका और संयुक्त राज्य अमेरिका मं महिलाओं को 1944 मतक राजनीतिक मताधिकार के लिए इंतजार करना पड़ा, किंतु भारत में स्वतंत्रता के बाद स्वभाविक व सहज रूप से पुरूषों के साथ महिला मताधिकार भी प्राप्त हो गया।

महिलाओं को राजनीतिक रूप से सशक्त बनाने का पहला प्रयास पंचायती राज अधिनियम में किए गए परिवर्तन के जरिए किया गया। पंचायती राज को संविधान (73वां संशोधन) अधिनियम के 24 अपैल 1993 से एक अधिसुचना के द्वारा लागू किया गया। इस प्रकार आधार स्तर पर लोकतंत्र भारत के संविधान द्वारा अपने नागरिकों को प्रदत्त अधिकार का एक हिस्सा बन गया है।

महिलाओं के पंचायती रात में भागीदारी बढ़ाने का असर गाँवों में देखा जा सकता है महिलाएँ जहां पंच, सरपंच सहित त्रिस्तरीय पंचायती राज व्यवस्था में हर स्तर पर कुशल नेतृत्व कर्ता के रूप में सामने आई हैं।

निष्कर्ष

महिलाऐं हमारे देश की आबादी का लगभग आधा हिस्सा है। अतः राष्ट्र के विकास में महान कार्य में महिलाओं की भूमिका और योगदान को पूरी तरह सही परिपेक्ष्य में रखकर राष्ट्र निमार्ण के कार्य को समझा जा सकता है। महिलाओं को विकास की मुख्य धारा में जोड़े बिना समाज, राज्य और देश के आर्थिक, सामाजिक, राजनीति, स्वास्थ्य और शिक्षा के विकास की कल्पना भी नहीं की जा सकती इसके बावजूद भी उनके साथ घर, समाज और राज्य में दूसरे दर्जे के नागरिक का व्यवहार होता आया है। पुरूष समाज ने महिलाओं की गतिशीलता पर अनेक प्रतिबंध लगा दिए, जिससे घर से बाहर और विशेषकर राज्य और राजनीतिक गतिविधियों में उसे अलग रखा गया। इस तरह भारत में महिलाओं की स्थिति परिवार, समाज, आर्थिक स्वास्थय, शिक्षा, राजनीति आदि में अधीनस्थ की रही। परंतु अंग्रेजी शिक्षा के प्रसार और भारत सरकार द्वारा किये गये प्रयास और भारतीयों के बीच पश्चिमी स्वतंत्र विचारधारा के प्रभाव और विभिन्न सुधार आंदोलनां ने इस संबंध मं पहली भूमिका निभाई।

पंडित जवाहरलाल नेहरू का मनना था कि केवल स्त्री शिक्षा को परिवर्तन का उपयुक्त साधन नहीं माना जा सकता उनका कहना था कि यदि महिलाओं का संघर्ष सामान्य राजनीतिक, आर्थिक और सामाजिक संघर्ष से अलग रह गया तो उनके आंदोलन का अधिक लाभ, शक्ति और सुदृढ़ता नहीं मिलेगी। केवल उच्च वर्ग की महिलाओं तक ही सीमित रह जायेंगे।

आज सरकार महिलाओं कि स्थितियों में सुधार और उन्हें सशक्त बनाने वाले सारे प्रयासों पर जोर दे रही है। सरकार गाँव व जंगल में अपनी पहचान खोई महिलाओं से लेकर आधुनिकता से कदमताल मिलाती महिलाओं के साथ है, वह आल उन्हें विकास के वह सारे मानका देने को तैयार है जो उन्हें सशक्त बनाने के लिए जरूरी है। सरकार महिलाओं के स्वास्थ्य, खाद्य, पोषक सुरक्षा, न्यूनतम बुनियादी आवश्यकताओं व सुविधाओं सहित शिक्षा, रोजगार व न्याय जैसे उपक्रमों को भी बेहतरीन दशा व दिशा देने के पक्षधर है क्योंकि समाज व पुरूषों के नजरिऐ में बदलाव लाने के साथ महिलाओं में आर्थिक सम्पन्नता का आना बहुत आवश्यक है। यह आर्थिक सम्पन्नता ही उसके सामाजिक व राजनैतिक शक्ति का निर्धारण करेगी।

RRIJM 2015, All Rights Reserved

सदर्भ ग्रंथ

1- वीणा गर्ग (2011) भारतीय महिलाओं एक विश्लेषण, आर्य पब्लिकेशन, दिल्ली पृष्ठ क्रमांक – 203.

2- पी.आर. शर्मा (2011) भारतीय नारी तथा कानूनी संरक्षण, (भारतीय समाज में नारी– प्रज्ञा शर्मा) पोइन्टर पब्लिशर्स, जयपुर पृष्ठ क्रमांक – 55.

3- आशु रानी (2002) महिला विकास कार्यक्रम इनाश्री पब्लिशर्स, जयपुर पृष्ठ क्रमांक –11–18.

4- शर्मा प्रज्ञा (2001) भारतीय समाज में नारी, पोन्इटर पब्लिशर्स पृष्ठ क्रमांक – 25–26.

5- चन्द्रभान यादव (सितंबर 2011)– 'बालिका शिक्षा से ही होगा देश विकास' कुरूक्षेत्र पृष्ठ क्रमांक– 24.

6- प्रतापमल देवपुरा (जून 2010)– 'आर्थिक स्वावलंबन से होंगी महिलाऐं सशक्त' कुरूक्षेत्र पृष्ठ क्रमांक – 16.

7- शुभकर बनर्जी (दिसंबर 2005)– 'महिला कुपोषण एक राष्ट्रीय समस्या' कुरूक्षेत्र पृष्ठ क्रमांक '36.

8- सुखपाल जी श्री वास्तव (अक्टूबर 2008)– 'ग्रामीण भारत में महिलाओं की स्वास्थ्य स्थिति' कुरूक्षेत्र पृष्ठ क्रमांक – 29.

9- प्रज्ञा शर्मा (2010)– शिक्षित कार्यशील महिला एवं पारिवारिक दायित्व (आलेख– भारतीय समाज में नारी)– पृष्ठ क्रमांक – 144–145.

10- मोदी अनीता (अक्टूबर 2009) – 'ग्रामीण अर्थव्यवस्था के विकास में महिलाओं का योगदान' कुरूक्षेत्र वर्ष 55 अंक –12 पृष्ठ क्रमांक – 82–32.

11- शिखा अग्रवाल (आलेख–2001)– 'राजनीतिक परिदृश्य में नारी' (भारतीय समाज में नारी) पृष्ठ क्रमांक – 101, 102, 204, 205.

12- मनोज श्रीवास्तव (सितंबर 2011)– 'पंचायती राज के जरिए राजनीतिक रूप से सशक्त हुई महिलाएँ' कुरूक्षेत्र अंक–11, पृष्ठ क्रमांक–14.

13- रवि प्रकाश यादव रागिनीदीप, पूजा राय (2010)– 'भारत में महिला श्रमिक' (एटलांटिक पब्लिशर्स एवं डिस्ट्रीब्यूटर्स प्राइवेट लिमिटेड नई दिल्ली) पृष्ठ क्रमांक – 84.

14- शिव शंकर सिंह (2000)– ' भारत में समन्वित ग्रामीण विकास एवं नियोजन' राधा पब्लिकेशन नई दिल्ली, पृष्ठ क्रमांक – 15.

RRIJM 2015, All Rights Reserved